शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-2 (April-June) 2026
Page No- 44-48
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

1. ब्रजेश कुमार ठाकुर
शोध-छात्र : विश्वविद्यालय हिन्दी-विभाग,
तिलका माँझी भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर.

2. डॉ. पुष्पा कुमारी
शोध-निर्देशक : सुंदरवती महिला
महाविद्यालय, भागलपुर, बिहार.

Corresponding Author :

ब्रजेश कुमार ठाकुर
शोध-छात्र : विश्वविद्यालय हिन्दी-विभाग,
तिलका माँझी भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर.

निरुपमा राय की कहानियों का शिल्प

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में महिला साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान है। इन लेखिकाओं ने स्त्री-पुरुष सम्बन्ध को नये आयामों से देखा। नारी के हृदय की व्यथा का सचोट एवं वास्तविक चित्रण किया। साथ ही नारी स्वतंत्रता एवं जागृति की बात भी कही। इस के साथ साथ समाज में आये नये परिवर्तन एवं फैली हुई पुरानी मान्यताओं के जकड़न की भी चर्चा की। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध दांपत्य सम्बन्ध अलग नए सन्दर्भों से परखा गया है। निरुपमा राय के समग्र कथा साहित्य का शिल्प विषयक अध्ययन प्रस्तुत अध्याय में पूर्ण करने का हमने प्रयास किया है।

'भाषा' साहित्य का वह महत्वपूर्ण अंग है जिसके बिना साहित्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है, समाज बिना भाषा के मूक है। भाषा के बिना ज्ञान के विकास की बातें ठप्प हो जाती है। ज्ञान के कपाट तब खुलते हैं जब भाषा का उद्भव होता है। वास्तव में अनुभूति, अभिव्यक्ति तथा संप्रेषण की सारी क्रियाएं भाषा के बगैर संभव नहीं। मनुष्य को अपने भावों संवेदनाओं को व्यक्त करने के लिए भाषा संप्रेषण का सहारा लेना ही पड़ता है। संप्रेषण का माध्यम ही तो भाषा है। रचनाकार की अनुभूति को पाठक भाषा के माध्यम से ही महसूस कर पाता है। इसलिए भाषा के बिना मनुष्य जीवन की कल्पना करना भी असंभव है। भाषा एक सार्वजनिक संपति है। रचनाकार उसका वैयक्तिक प्रयोग करता है। निश्चित ही इस बात में कुशलता आवश्यक है। जिसमें रचनाकार सिद्भहस्त होता है। रचनाकार यह चमत्कार कैसे कर सकता है इस संदर्भ में राजेन्द्र यादव जी कहते हैं- "लेकिन भाषा अपने आप में क्या है? क्या केवल शब्दों का व्याकरण सम्मत समुच्चय ? बात नयी नहीं है, लेकिन यहाँ दुहराना जरुरी है कि शब्दों का अपना कोई अर्थ नहीं होता, केवल पर्याय होते हैं। शब्द केवल चीजों के पर्याय या प्रतीक होते हैं और बार-बार के प्रयोग से हम उन्हें एक आरे सुनिश्चित कर लेते हैं तो दूसरी अपने आशय और व्यक्तित्व मिला मिला कर सुनिश्चित अर्थों को तोड़ते फैलाते जाते हैं। बार-बार का प्रयोग एक असंग बनाता और हर व्यक्ति, समय का आसंग अलग-अलग होता है।"[1]

स्पष्ट है बोल चाल की भाषा में रचनाकार का व्यक्तित्व उसके

जीवन के आशय, परिवेशगत संदर्भ, जो निरंतर परिवर्तनशील है। समाविष्ट करने से ही सार्वजनिक भाषा व्यक्तिगत रुप धारण करती है। इसलिए भाषा को जड़ नहीं कहा जा सकता भाषा निरंतर परिवर्तनशील, गतिशील जीवित स्वतंत्र सत्ता है। औरो से मिलती है और औरो से जोड़ती भी है। उसका सहज स्वाभाविक प्रयोग ही उसकी शक्ति है। भाषा के साथ मनमानी नहीं की जा सकती। जबर्दस्ती शब्द मिलाये नहीं जा सकते। एसे करने से वह कित्रिम एवं बनावटी बन जाती है और उसकी जीवंतता समाप्त हो जाती है। भाषा केवल हमारे भावों तथा विचारों का वहन नहीं है, जिसे ठोक -पिटकर हमेशा काम में लाया जा सके। उसका एक स्वतंत्र व्यक्तित्व एवं वातावरण होता है। जो सूक्ष्म दृष्टि से देखा जा सकता है। हमारी ही तरह उसकी भी शक्ति और इच्छा होती है और उसके भी संस्कार होते है। 'ब्लेकर मूलर' अनुभूति और व्यक्तित्व के बीच भाषा जीवित स्वतंत्र सता होती है। शब्द जड़ नहीं होते क्योंकि उसमें अर्थ नाम का प्राण बैठा होता है। यह प्राण अपना इतिहास, व्यक्तित्व संपर्क और विकास-ह्रास सभी कुछ जीता है। इसलिए शब्दों की स्पंदित केप्सुल्स कुप्पियों में ही हमारा सारा इतिहास, संस्कृति, चिंतन, पुरा मानव जीवन छिपा रहता है। शब्द इसके वाहक होते हैं। इसलिए परिवेश के बदले के साथ साथ शब्द बदल जाते हैं, भाषा बदल जाती है। शब्द कोमल तब बन जाते हैं जब रचनाकार का मानस कोमल होता है। जब शब्द विद्राही बनते हैं तब रचनाकार की चेतना भी विद्रोही बन जाती है। शब्द एवं रचनाकार का व्यक्तित्व आपस में जुड़ा हुआ होता है। इन दोनों को अलग नहीं किया जा सकता। "भाषा जिंदगी की नब्ज है और शब्दों का विद्रोही हो उठना, जिंदगी का विद्रोही हो उठना है। अगर आज हमारी भाषा के सारे शब्द अराजक, हिंसक और दुर्दांत हो उठते हैं तो कुसूर उनका नहीं जिंदगी की वास्तविकताओं का है"[2]

इस तरह भाषा, रचनाकार, जीवन संदर्भ, परिवेश सब एक दूसरों के साथ जुड़े हुए हैं। कथा साहित्य की भाषा तो साहित्य की अन्य विधाओं की तुलना में और भी महत्त्व रखती है। क्योंकि "कथा जिंदगी का सीधा अनुवाद है। वहाँ शब्द और उसके पीछे का चित्र अलग होकर नहीं बोलते। भाषा में ढल कर और घुलकर संपूर्ण स्थिति का चित्रण और स्वर बनता है। इसलिए कथा-भाषा पर विचार शब्दों के आधार पर नहीं संपूर्ण अभिव्यक्ति या टोटल एक्सप्रेशन के आधार पर होना चाहिए। कथा-भाषा यह पारदर्शी शीशा है जिसके दूसरी और जिंदगी गाल सटाये झाँकती है। उसे हम जैसे के तसै छू भले ही न सके, महसूस जरूर कर सकते हैं, अपने भीतर फिर से जी सकते हैं, क्योंकि वस्तुतः बाहर के साथ-साथ जीते तो हम अपनी ही जिंदगी है। जहाँ शीशे की अपनी खूबसूरती और नक्काशी दृश्य से ध्यान हटा यां बाँट ले, वहाँ कथाकार वेश में कवि होता है। भाषा विषयक अतिरिक्त चिंता कथाकार से अधिक कवि में होती है।"[3]

कथाकार के सामने दूसरा संकट यह होता है। पहली बार वह जिंदगी जो महसूस कर रहा है उसे कैसे अभिव्यक्ति दे। दूसरा अभिव्यक्त की गई जिंदगी से पाठकों को कैसे महसूस कराया जाये। दोनों का माध्यम भाषा ही है। जो जिंदगी वह महसूस कर रहा है उसे अभिव्यक्त करते समय ठोस शब्दों में रखना रचनाकार की सामर्थ्य का काम है। महसूस करना भी ठोस रूप में तभी व्यक्त हो सकता है जब अनुभूति गहरी है। गहरी अनुभूति को शब्द अपने आप मिलते है। ये बात भी सही है कि सक्षम अभिव्यक्ति के बावजूद भी रचनाकार अक्सर यह महसूस करता है कि काफी कुछ है जिसे वह व्यक्त नहीं कर पाया। इस संदर्भ में राजेन्द्र यादव का कथन है-"अनुभव करने, सोचने की भाषा, निराकार, गतिमय, सजीव और बड़ी लचीली है, उसे ठोस शब्दों में रख देना और महसूस करना कि जाने कितना कुछ छुटा जा रहा है, अपने को संप्रेषित करके बाहर से जुड़ने के प्रयत्न में और भी अकेले छूटते जाता है। जीभ के स्वाद को शब्दों, आकितियों और मुद्राओं में व्यक्त करने की मजबूरी और अधुरेपन का एहसास की यह तो व्यक्ति के अनुसार हर स्वादिष्ट चीज का स्वाद हो सकता है। उसी विशिष्ट चीज का वही इकलौता स्वाद कहा है जिसे मैं दूसरे तक पहुंचा देना चाहता हूँ। दूसरा तो अपने ही किसी विशेष स्वाद का आसंग जगाकर इसका अनुमान भर करेगा ।... या अपने ही आसंग में इतना कि मैं और मेरे प्रयत्न का उसे ख्याल भी नहीं रहते पर किसी एक से तादात्म्य और व्यक्तित्व विलयन की अपेक्षा यह अनुभव की समस्या है जो अपने अकेलेपन से लड़ते हुए रचनाकार अनुभव करता है।"[4]

यह संकट समाप्त तभी होंगे, भाषा और लिख छपने की भाषा एक हो। जब रचनाकार की सोचने की भाषा अनुभव करने की भाषा और जीवन जीने की भाषा एक हो। इसी स्थिति में रचनाकार अपनी अभिव्यक्ति सटीक शब्दों में कर सकता है। अपनी अनुभूतियां को भाषा बिंब या शब्दों के माध्यम से पकड़ पाता है। जी-चुकने पर ही लिखने की स्थिति में वह होता है। इस भोगे हुए सच को जब वह प्रस्तुत करेगा तो ही पाठक उसमें अपनी समानता पायेगा और उसमें रुचि लेगा। पर जिंदगी की भाषा होने के कारण ही रचनाकार सहज एवं स्वाभाविक रुप से लिखेगा तथा पाठक उसे उतनी ही सहजता से महसूस करेगा। अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जायेगा कि कथा साहित्य की भाषा जीवन संदर्भों से जुड़ी हुई भाषा ही हो सकती है। यह जितनी जीवन से जुड़ी हुई होगी उतनी ही उसमें ताजगी, रवानगी उत्पन्न होगी। लेखिका निरुपमा सेवती लेखन को उच्छदेन कर्म मानती है। प्रचलित, समकालीन सांस्कृतिक सत्ता द्वारा प्रतिपादित मूल्यों पर प्रश्न चिहन लगाना चाहती है। अपने साहित्य के माध्यम से नये भावबोध की अभिव्यक्ति करना चाहती है। यह भाव-बोध लेखिका की अपनी जीवनानुभूति से उपजा है। नये भाव-बोध की अभिव्यक्ति के लिए प्रचलित भाषा काम में आनेवाली नहीं है। अतः वह प्रचलित शब्दों में नये अर्थ भरकर नये भाव-बोध को स्वर देती है। यह काम वह कैसे कर लेती है उसके संदर्भ में उन्होंने लिखी है- ''ऐसे तो जब व्यक्ति स्वयं के या परिवेश के बारे में ज्यादा सचेत होता है तो दूसरों के बारे में भी वह अपने में एक जागरुकता अनुभव करता है। सचते ता कीयही परस्परता अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम के प्रति भी तत्पर करती है। मेरे लिए 'साहित्य' या 'शब्द' का माध्यम विशाल मानवीयता से अपनेपन की सहजता से और जिन्दगी के पूरेपन से जुड़ा है.... अधिकाधिक आकिष्ट करता है यह माध्यम इसलिए भी कि इसमें अपने अस्तित्व को जिया जाता है और साथ ही अन्य के अस्तित्व को जीते हुए अपने और अन्य के अस्तित्व की अभिन्नता की और बढ़ना होता है।... अपना संघर्ष अन्य और अन्यों का संघर्ष अपने भीतर प्रतिफलित होने का अनुभव एक विराट अनुभव से जुड़ता है। जैसे कहानी का बिंदु उपन्यास की विस्तृत भूमि पर फैलता, पल्लवित होते चला जाता है।''[5]

निरुपमा राय के लिए लेखन एक ऊर्जा है। साहित्यिक उर्जा, उर्जा को प्रज्वलित रखना हर एक लेखक का कर्तव्य है। प्रकिति ने जो प्रारंभ कर दिया वह कभी नहीं मरता। निरुपमा जी का मानना है। रुप निर्धारित जरुर हुआ है पर समय-काल के साथ आकार एवं छवि में बदलाव आते रहते हैं। इस बात पर भी उन्हें आस्था है। रचनाकार अपनी रचना में दूसरे की भाषा का प्रयोग भी कर सकता है। इस में वह कम अधिक मात्रा में सफलता भी मिलती है। वैसे दूसरे की भाषा बाले ना और लिखना असंभव नहीं तो कठीन कार्य अवश्य है। इस तरह कथा-साहित्य में भाषिय स्तर पर लेखक के सामने अनेक चुनौतियाँ है। नये भाव-बोध को स्वर देने की चुनौती, मिन्न-भिन्न पत्रों की भाषा का प्रयोग करने की चुनौती, कथ्य की सक्षम शब्दों में अभिव्यक्ति की चुनौती, अभिव्यक्ति के संप्रेषण की चुनौती, परिवेश को शब्दों के माध्यम से उभारने की चुनौती और समय को परास्त करके नये आकाश को छूने की चुनौती। निरुपमा ने यह काम बडे कौशल से किया है। उनके उपन्यास एवं कहानी की भाषा की विशेषताओं को निश्न रुप से रेखांकित किया जा सकता है। निरुपमा जी एक स्त्री लेखिका है। भाषा में वैसे तो सामाजीक भेद दिखाई देता है जैसे शिक्षित अशिक्षित, उच्च वर्ग निम्नवर्ग, ग्रामीण शहर की भाषा अलग-अलग होती है वैसे ही स्त्री और पुरुष की भाषा भी अलग-अलग होती है। भाषा-विज्ञान स्त्री और पुरुष की भाषा में भेद करता है। भाषा व्यक्तित्व से भी जुड़ी होती है, सामाजीक परिवेश से भी इसके साथ-साथ भाषा संस्कृति की भी वाहक होती है। पुरुष लेखकों की भाषा पुरुषों के स्वभाव, संस्कार, पुरुषों का परिवेश, पुरुषों का जीवन आदि से जुड़ी होती है। वैसे ही स्त्री की भाषा भी स्त्रियों के संस्कार, उसका स्वभाव, उसका जीवन, उसकी प्रवृति, उसके परिवेश से जुड़ी होती है। निरुपमा की भाषा पर विचार करते इन पहलुओं को भी ध्यान में रखना होगा। प्रसिद्ध स्त्रीवादी समीक्षक एलेन शो वोल्टर ने कहा है- ''स्त्री साहित्य के 'पाठ' का उसकी भाषा, मुहावरे, उसके सोचने के निश्चित ढंग और उसके आसपास के 'नेटवर्क' का होता है। उसका स्त्री के पाठ से गहरा रिश्ता होता है। यहाँ तक कि परंपरा और उसके कार्य व्यापार भी स्त्री-चेतना और स्त्री लेखन को प्रभावित करते है।'' अतः निरुपमा राय के कथा-साहित्य की भाषा पर विचार करते समय लेखिका एक स्त्री होने के नाते उसकी भाषा में कछु विशेष विशेषताएँ भी दिखाई

देती हैं क्या? इस पर भी सोचना अनिवार्य हो जाता है। इन सभी बातां पर विचार करते हुए निरुपमा राय के कथा-साहित्य की भाषा पर निम्न रुप से विचार किया जा सकता है। हिंदी कहानी के विकास में निरुपमा राय का नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने समय में स्त्री जीवन की जटिलताओं, समाज के नैतिक ढाँचा और व्यक्ति के आतंरिक संघर्षों को जिस संवदेनशीलता और कलात्मकता से प्रस्तुत किया, वह उन्हें अन्य कहानीकारों से अलग पहचान देता है। निरुपमा राय के लेखन में विषय जितना महत्वपूर्णहै, उतना ही ‘शिल्प’ भी। उनकी कहानियों में विषय और शिल्प का संतुलन इतना परिपक्व है कि वे केवल कथा नहीं, बल्कि ‘मानव मन की व्याख्या’ बन जाती हैं।

शिल्प किसी भी साहित्यिक रचना का प्राण है। कथा के लिए कथानक जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक है कि उसे किस शैली, किस संरचना, किस दृष्टिकोण और किस भाषा में प्रस्तुत किया गया है। निरुपमा राय के लेखन में यह सभी तत्व गहराई से मौजूद हैं। ‘शिल्प’ का अर्थ केवल लेखन की बाह्य संरचना नहीं है। यह कथा के संपूर्ण रुपात्मक सौंदर्य का संकेतक है, जिसमें भाषा, शैली, कथन-प्रणाली, प्रतीक, संवाद, पात्रों की प्रस्तुति, दृष्टिकोण और लय सब शामिल हैं। निरुपमा राय के शिल्प की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह कथा को केवल घटनाओं के रुप में नहीं, बल्कि ‘जीवन के अनुभवों की एक संरचना’ के रुप में रचती है। उनके यहाँ शिल्प, कथानक का पूरक नहीं बल्कि उसका आत्मा-स्रोत है। उनकी कहानियां में शिल्प का प्रयोग विषय को प्रभावी बनाने के लिए किया जाता है कि कभी सीधे संवादों के माध्यम से, कभी प्रतीकात्मक ढंग से, तो कभी पात्रों की मौनता के द्वारा।

निरुपमा राय की कथा-संरचना पारंपरिक रैखिक (सपदमंत) नहीं है। उनके यहाँ कहानी एक प्रक्रिया की तरह विकसित होती है, जिसमें घटनाएँ केवल बाह्य नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक विकास के चरण बनती हैं। उनकी कहानियाँ बहुत लंबी नहीं होतीं, पर उनमें ‘भावनात्मक विस्तार’ बहतु गहरा होता है। प्रत्यके घटना में अर्थ की परतें छिपी रहती हैं। वे बाहरी घटनाओं से ज़्यादा ‘भीतर के संघर्ष’ पर ध्यान देती हैं। उदाहरण के लिए, उनकी कई कहानियों में स्त्री पात्र के जीवन की कोई साधारण घटना (जैसे पति का उपेक्षापूर्ण व्यवहार, या समाज की कोई तिरछी दृष्टि) उसके अस्तित्व प्रश्न में बदल जाती है। निरुपमा राय समय के साथ बहुत कलात्मक व्यवहार करती है। वे कभी ‘कालक्रमिक’ ढंग से कहानी नहीं कहती। उनके यहाँ अतीत और वर्तमान का मले बहुत सहजता से होता है। यह तकनीक पात्र के भीतर की स्मृतियां और पछतावों को उभारने में मदद करती है। उदाहरण के तारै पर, जब पात्र वर्तमान में पीड़ा अनुभव करता है, तो उसका अतीत उसके मन में फ्लैशबैक के रुप में उभरता है, जिससे पाठक को उसके जीवन की जटिलता समझ आती है। उनकी कहानियाँ अकसर ओपन एंडिंग में समाप्त होती हैं। निरुपमा राय पाठक को यह स्वतंत्रता देती हैं कि वह स्वयं अंत की व्याख्या करे। यह उनके शिल्प की आधुनिकता का संकेत है।

निरुपमा राय का सबसे बड़ा योगदानउनके पात्र-चित्रण में देखा जा सकता है उनके पात्र सामान्य नहीं होते वे ‘संवदेनशील, आत्मविश्लेषी और जटिल’ होते हैं। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ केवल पीड़िता नहीं, बल्कि चितं नशील व्यक्तित्व है। वे अपने दर्द को समझती हैं, समाज को प्रश्न करती हैं और अपने भीतर एक आत्मबल खोजती है। उदाहरणस्वरुप, उनकी कहानी में स्त्री पात्र समाज के पारंपरिक ढाँचे को स्वीकार नहीं करती, बल्कि उसे तोड़कर अपनी पहचान बनाना चाहती है। निरुपमा राय के पात्र “विद्रोही” नहीं बल्कि “संवेदनशील यथार्थवादी” हैं- वे अपने दर्द को चुपचाप सहने के बजाय, उसे अर्थ देने का प्रयास करती हैं। निरुपमा राय के शिल्प की एक अनोखी विशेषता है ‘आत्मसंवाद’। उनके पात्र स्वयं से बात करते हैं, अपने जीवन और निर्णयों पर विचार करते हैं। यह तकनीक पात्र को गहराई देती है और पाठक को उसके मन में झाँकने का अवसर देती है।

भाषा किसी कहानी की आत्मा होती है, और निरुपमा राय ने इसे अत्यतं प्रभावशाली ढंग से साधा है। उनकी भाषा सधी हुई, परंतु भावनात्मक है। उसमें अलंकरण नहीं, बल्कि ‘संवदेना का प्रवाह’ है। वे जटिल भावनाओं को सरल वाक्यों में कहने की कला जानती है। उनके वाक्य लंबे नहीं होते; वे संक्षिप्त पर अर्थपूर्ण होते

हैं। यह उनके शिल्प की शक्ति है कि वे कम शब्दों में अधिक अर्थ व्यक्त करती है। निरुपमा राय संवादों में किात्रिमता नहीं लातीं। उनके पात्र वैसे ही बोलते हैं जैसे वास्तविक जीवन में बोलते हैं। संवादों के माध्यम से कथा आगे बढ़ती है और पात्रों का स्वभाव भी उजागर होता है। कभी-कभी मौन भी संवाद बन जाता है। यह "अकथ संवाद" उनकी कला की ऊँचाई है कि जहाँ चुप्पी ही सबसे प्रभावशाली वाक्य बन जाती है।

निरुपमा राय के लेखन में प्रतीकात्मकता का बहुत महत्वपूर्णस्थान है। वे वस्तुओं, दृश्यों और प्राकृतिक घटनाओं को केवल वर्णन के लिए नहीं, बल्कि 'मनोवैज्ञानिक अर्थ' देने के लिए प्रयोग करती है। उनकी कहानियों में मौसम, रात-दिन, बारिश, धूप सब पात्रों के मनोभावों को दर्शाते हैं। यदि पात्र के भीतर पीड़ा है, तो बाहर का वातावरण भी उदास होता है; यदि पात्र को आत्मबोध हुआ है, तो बाहर का आकाश उजला हो जाता है। कई बार कोई पात्र स्वयं एक प्रतीक बन जाता है। जैसे कोई दबा हुआ पात्र समाज के शोषित वर्ग का प्रतीक हो सकता है। उनकी कहानियां में घर, खिड़की, दरवाज़ा, आईना, साड़ी, दीपक आदि वस्तुएँ केवल सजावट नहीं, बल्कि प्रतीकात्मक अर्थ रखती है। जैसे "खिड़की" का अर्थ खुलापन, स्वतंत्रता या दृष्टि का विस्तार होता है; वहीं "दीवार" बंधन और अवरोध का प्रतीक बन जाती है।

निरुपमा राय यथार्थवादी लेखिका है। वे अपने समय की सामाजिक सच्चाइयां को बहुत बारीकी से पकड़ती हैं। उनके शिल्प की खासियत यह है कि वे सामाजिक यथार्थ को उपदेशात्मक ढंग से नहीं, बल्कि जीवन के भीतर से प्रकट करती है। उनकी कहानियों में स्त्री केवल अन्याय का शिकार नहीं है, बल्कि अपनी स्थिति का विश्लेषण करती हुई सोचने वाली इकाई है। शिल्प यहाँ मनोवैज्ञानिक गहराई और सामाजिक टिप्पणी दोनों को एक साथ प्रस्तुत करता है। निरुपमा राय की कथन-शैली में प्रथम पुरुष और तृतीय पुरुष दोनों दृष्टियाँ मिलती हैं। प्रथम पुरुष दृष्टिकोण, जब कथा "मैं" के माध्यम से कही जाती है, तो उसमें आत्मीयता बढ़ जाती है। यह पात्र और पाठक के बीच सीधा संबंध स्थापित करता है। ततृीय पुरुष दृष्टिकोण', इसमें लेखक एक पर्यवेक्षक की तरह कार्य करता है घटनाओं और पात्रों का विश्लेषण करता है। यह दृष्टिकोण निरुपमा राय को मनोवैज्ञानिक गहराई और सामाजिक वस्तुनिष्ठता दोनां देता है। उनकी कहानियों में लय बहुत स्वाभाविक है। कहीं-कहीं वाक्यों की पुनरावृत्ति से भावनात्मक प्रभाव बढ़ता है। यह लय पाठक के मन में संवदे ना की धारा उत्पन्न करती है। उनकी स्त्रियाँ अकसर बाले ती कम हैं, पर उनका मानै ही सबसे गहरा संवाद हाते हैं। यह मौन समाज के प्रति प्रश्न बन जाता है। कहानी के अंत में जब पात्र अपने अस्तित्व को पहचान लेती है, तो वहाँ शिल्प में बदलाव आता है- भाषा और प्रतीक उजले हो जाते हैं। यह परिवर्तन निरुपमा राय की कलात्मक सूझ का प्रमाण है।

समग्रता में देखें तो निरुपमा राय का शिल्प हिंदी कहानी को नया आयाम देता है। उनकी कहानियों में- सामाजिक यथार्थ की सजीवता, स्त्री के मानसिक संघर्ष की गहराई, प्रतीकों की कलात्मकता, भाषा की सादगी और व्यंजना तथा कथानक की आधुनिक संरचना, सभी का अद्भुत सामंजस्य मिलता है। उनका शिल्प न तो केवल बौद्धिक है और न ही मात्र भावनात्मक, वह दोनोंका संतुलित रुप है। निरुपमा राय की कहानी कला हमें यह सिखाती है कि 'शिल्प केवल सौंदर्य नहीं, बल्कि विचार का वाहक' भी होता है। उनका लेखन यह प्रमाणित करता है कि हिंदी कहानी में स्त्री ने केवल विषय के रुप में नहीं, बल्कि शिल्पकार के रुप में भी अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज की है।

संदर्भ :

1. मधुरेश. "हिन्दी उपन्यास का विकास". प्रथम, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014.
2. मदान, डॉ. इन्द्रनाथ "हिन्दी उपन्यास : एक नई दृष्टि". प्रथम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975, पृ. 185.
3. सिंह, नामवर. "कहानी : नई कहानी". प्रथम, लाके भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ. 67.4.
4. वही, पृ. 80.
5. मदान, डॉ. इन्द्रनाथ "हिन्दी उपन्यास : एक नई दृष्टि". प्रथम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975, पृ.162.

•